

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 11 अध्याय 8: पिंगला की कथा

20 September 2026



चौबीस गुरुओं के महान् उपदेश को आगे बढ़ाते हुए, परिव्राजक अवधूत राजा यदु को प्रकृति के विविध रूपों से प्राप्त नौ और शिक्षाओं का वर्णन करते हैं, और अन्त में मिथिला की एक वेश्या पिंगला की मार्मिक कथा सुनाते हैं, जिसने आशा त्यागते ही परम शान्ति पाई।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विङ्गडम् में आपका स्वागत है, जो श्रीमद्भागवत महापुराण की पावन कथाओं तथा शिक्षाओं के माध्यम से एक भक्तिपूर्ण यात्रा है। पिछले अध्याय में, भगवान् श्रीकृष्ण ने राजा यदु तथा एक शान्त परिव्राजक की कथा सुनाकर उद्धव-गीता का आरम्भ किया — एक अवधूत, जिसने संसार के तत्त्वों तथा जीवों को ही अपना गुरु बना लिया था। वहाँ अवधूत ने अपने चौबीस गुरुओं में से प्रथम आठ के विषय में बताया, पृथ्वी से लेकर कपोत तक। अब, इस अध्याय में, वे आगे बढ़ते हैं, नौ और गुरुओं तथा उनसे प्राप्त ज्ञान का वर्णन करते हुए: अजगर से सन्तोष, समुद्र से समता, पतंगे से काम का संकट, भ्रमर से संयम एवं विवेक, हाथी से भय, मधु निकालने वाले से संचय की मूर्खता, हरिण से संयम, तथा मछली से जिह्वा पर विजय। तत्पश्चात् अध्याय का समापन भागवत की सर्वाधिक प्रिय कथाओं में से एक से होता है — पिंगला का जागरण, वह वेश्या जिसने एक ही निराशा-भरी रात्रि में संसार की समस्त आशा त्यागकर परम शान्ति पाई।

अध्याय को जानकारो

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 11 (एकादश स्कन्ध)
- अध्याय: 8 (अष्टम प्रवचन)
- अध्याय शीर्षक: नौ और गुरु तथा पिंगला की कथा
- प्रधान वक्ता: अवधूत ब्राह्मण, राजा यदु को उत्तर देते हुए; समस्त श्रीकृष्ण द्वारा उद्धव को, तथा सुकदेव गोस्वामी द्वारा राजा परीक्षित को कहा गया
- प्रधान श्रोता: राजा यदु; तथा, कथा के ढाँचे में, उद्धव तथा राजा परीक्षित
- मुख्य स्थान: राजा यदु तथा एक परिव्राजक अवधूत का प्राचीन मिलन, द्वारका में भगवान् की उद्धव को कही गई कथा के भीतर
- केन्द्रीय विषय: अवधूत ने अपने नौ और गुरुओं — अजगर, समुद्र, पतंगा, भ्रमर, हाथी, मधु निकालने वाला, हरिण तथा मछली — से जो सीखा, तथा पिंगला वेश्या का जागरण
- प्रधान श्लोक-सीमा: स्कन्ध 11, अध्याय 8, श्लोक 1-44
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण

पिछले अध्याय का सन्दर्भ

अध्याय 7 में, श्रीकृष्ण ने अपने प्रस्थान की पूर्वसंध्या पर उद्धव को वैराग्य तथा समदृष्टि का आह्वान किया, और इस मार्ग को राजा यदु तथा एक परिव्राजक के प्राचीन संवाद से स्पष्ट किया। उस अवधूत ने अपने चारों ओर के संसार से चुने हुए चौबीस गुरुओं का नाम लिया, और प्रथम आठ — पृथ्वी, वायु, आकाश, जल, अग्नि, चन्द्रमा, सूर्य तथा कपोत — का वर्णन किया। यह अध्याय उसी उपदेश को वहीं से आगे उठाता है, जहाँ अवधूत श्रद्धालु राजा को उपदेश देते रहते हैं।

विवेकी आत्मा का मार्ग

ब्राह्मण ने राजा यदु को स्मरण कराते हुए आरम्भ किया कि इन्द्रियों से उत्पन्न सुख तथा दुःख सर्वत्र भोगे जाते हैं — स्वर्ग में भी उतने ही जितने नरक में — और प्रत्येक देहधारी के पास स्वयं ही आ जाते हैं। अतः बुद्धिमान् व्यक्ति को उनके पीछे कभी नहीं दौड़ना चाहिए।

श्रीब्राह्मण उवाच

सुखमैन्द्रियकं राजन् स्वर्गे नरक एव च ।

देहिनां यद् यथा दुःखं तस्मान्नेच्छेत तद् बुधः ॥ १ ॥

śrī-brāhmaṇa uvāca sukham aindriyakam rājan svarge naraka eva ca dehinām yad yathā duḥkham tasmān neccheta tad-budhaḥ

अर्थ: ब्राह्मण ने कहा: हे राजन्, इन्द्रियों से प्राप्त सुख देहधारियों को स्वर्ग तथा नरक दोनों में उसी प्रकार मिलता है जैसे उनका दुःख; अतः बुद्धिमान् जन ऐसे सुख की लालसा नहीं करते। (स्कन्ध 11, अध्याय 8, श्लोक 1)

अजगर तथा समुद्र — सन्तोष एवं समता

अजगर से अवधूत ने सन्तोष सीखा। उस जीव की भाँति, बिना प्रयास के जो भोजन मिले उसे ही ग्रहण करना चाहिए, चाहे वह अधिक हो या कम, मीठा हो या कड़वा; और यदि भोजन बिल्कुल न मिले, तो अजगर की भाँति धैर्यपूर्वक प्रतीक्षा करनी चाहिए, अनेक दिनों तक विश्राम करते हुए तथा यह विश्वास रखते हुए कि भाग्य ही आहार देता है। शरीर, मन तथा इन्द्रियों से बलवान् होते हुए भी, साधु अपने शरीर को व्यर्थ की चंचल दौड़-धूप से मुक्त रखता है, केवल लाभ के लिए कुछ नहीं करता।

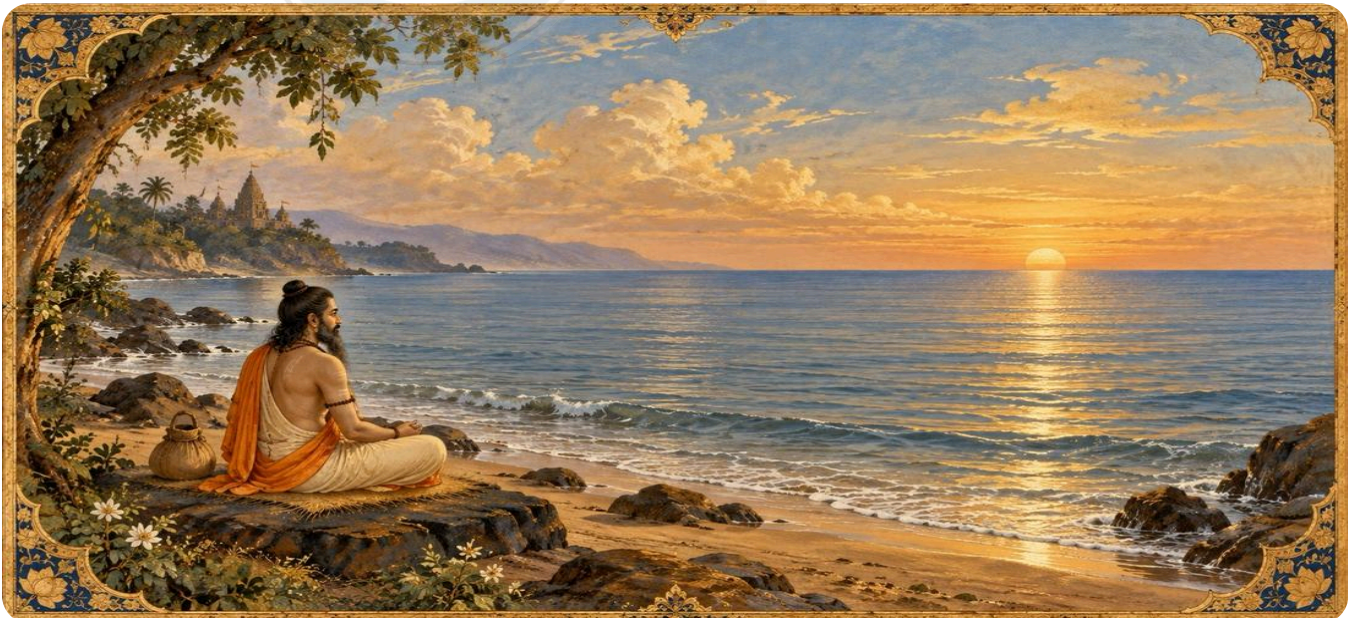
समुद्र से उन्होंने समता सीखी। साधु को शान्त तथा गम्भीर रहना चाहिए, शान्त सागर की भाँति गहरा तथा अथाह — अपनी इच्छाएँ पूर्ण होने पर सीमा से बाहर न बहे, और अपूर्ण रहने पर निराशा में सूख न जाए।

समृद्धकामोहीनो वा नारायणपरो मुनिः ।

नोत्सर्पेत न शुष्येत सरिद्धिरिव सागरः ॥ ६ ॥

samṛddha-kāmo hīno vā nārāyaṇa-paro muniḥ notsarpeta na śuṣyeta saridbhir iva sāgaraḥ

अर्थ: चाहे उसकी इच्छाएँ भरपूर पूर्ण हों या अपूर्ण रह जाएँ, नारायण-परायण मुनि न तो हर्ष से उमड़ता है और न शोक से सूखता है — समुद्र की भाँति, जो नदियों के मिलने पर न बढ़ता है और न मिलने पर घटता है। (स्कन्ध 11, अध्याय 8, श्लोक 6)



समुद्र से अवधूत ने समता सीखी — गहरा तथा अविचल रहना, लाभ से न उमड़ना और हानि से न घटना, जैसे सागर सम बना रहता है चाहे नदियाँ उस तक पहुँचें या न पहुँचें (श्लोक 6)।

पतंगा — काम का संकट

पतंगे से अवधूत ने इन्द्रियों को आकर्षण के वश में सौंप देने का संकट सीखा। जैसे एक पतंगा, ज्वाला के दर्शन से आकर्षित होकर, अग्नि में कूदकर नष्ट हो जाता है, वैसे ही जिस मनुष्य ने अपनी इन्द्रियों पर विजय नहीं पाई, वह स्त्री के मोहक रूप — भगवान् की माया — को देखकर उसके हाव-भावों से लुभा जाता है और विनाश के अन्धकार में गिर जाता है।

दृष्ट्वा स्त्रियं देवमायां तद्भावैरजितेन्द्रियः ।

प्रलोभितः पतत्यन्धे तमस्यग्नौ पतङ्गवत् ॥ ७ ॥

dṛṣṭvā striyaṁ deva-māyāṁ tad-bhāvair ajitendriyaḥ pralobhitaḥ pataty andhe tamasy agnau pataṅga-vat

अर्थ: स्त्री को, जो भगवान् की मायाशक्ति ही है, देखकर जिस मनुष्य ने अपनी इन्द्रियों को वश में नहीं किया, वह उसके हाव-भावों से मोहित होकर, पतंगे के अग्नि में गिरने की भाँति, अन्धकार में गिर जाता है। (स्कन्ध 11, अध्याय 8, श्लोक 7)



पतंगे से अवधूत ने अनियन्त्रित काम के विरुद्ध चेतावनी ग्रहण की — जो आत्मा मोहक विषयों की ओर दौड़ती है, पतंगे के ज्वाला की ओर जाने की भाँति, वह अपने ही विनाश को आमन्त्रित करती है (श्लोक 7)।

भ्रमर, हाथी तथा मधु निकालने वाला

भ्रमर से अवधूत ने दो शिक्षाएँ सीखीं। जैसे एक भ्रमर अनेक पुष्पों से थोड़ा-थोड़ा मकरन्द बिना उन्हें हानि पहुँचाए लेता है, वैसे ही एक भिक्षुक को अनेक घरों से थोड़ा-सा ही भोजन ग्रहण करना चाहिए, किसी को कष्ट दिए बिना, केवल शरीर-निर्वाह जितना। और जैसे भ्रमर छोटे-बड़े सभी पुष्पों से मधु एकत्र करता है, वैसे ही विवेकी व्यक्ति को समस्त शास्त्रों से, चाहे वे छोटे हों या महान्, सार ग्रहण करना चाहिए।

अणुभ्यश्च महद्भ्यश्च शास्त्रेभ्यः कुशलो नरः ।

सर्वतः सारमादद्यात् पुष्पेभ्य इव षट्पदः ॥ १० ॥

aṇubhyaś ca mahadbhyaś ca śāstrebhyaḥ kuśalo naraḥ sarvataḥ sāram ādadyāt puṣpebhya iva ṣaṭpadaḥ

अर्थ: छोटे तथा बड़े सभी शास्त्रों से बुद्धिमान् व्यक्ति सार ग्रहण करे, जैसे भ्रमर प्रत्येक पुष्प से मधु एकत्र करता है। (स्कन्ध 11, अध्याय 8, श्लोक 10)



भ्रमर से अवधूत ने सीखा कि अनेक से थोड़ा-थोड़ा ही लें और समस्त शास्त्रों का सार ग्रहण करें, जैसे भ्रमर छोटे-बड़े पुष्पों से बिना हानि पहुँचाए मकरन्द लेता है (श्लोक 10)।

तथापि भ्रमर ने ही एक और चेतावनी दी: भिक्षुक को कभी संचय नहीं करना चाहिए, सन्ध्या या अगले दिन के लिए कुछ भी न रखे, क्योंकि जो संचय करता है वह अपने संग्रह के साथ लोभी भ्रमर की भाँति नष्ट हो जाता है। हाथी से अवधूत ने काम के फंदे से बचना सीखा — जैसे एक मत्त हाथी, हथिनी की ओर आकृष्ट होकर, शिकारियों द्वारा फँसा लिया जाता है और बलवान् दाँतवालों से पराजित होता है, वैसे ही जो मनुष्य स्त्रियों के पीछे भागता है, वह अपने विनाश को बुलाता है। और मधु निकालने वाले से उन्होंने धन-संचय की मूर्खता सीखी: कंजूस जो धन बड़े कष्ट से जोड़ता है, उसे वह न भोगता है न दान करता है; कोई और आता है, मधु चुराने वाले की भाँति जो छत्ते को खोज लेता है, और सब कुछ ले जाता है।

हरिण तथा मछली — इन्द्रियों की रक्षा

हरिण से अवधूत ने सीखा कि एकान्त में रहने वाले को कभी सांसारिक संगीत तथा मनोरंजन में लीन नहीं होना चाहिए, क्योंकि हरिण, शिकारी के गीत में मुग्ध होकर, सरलता से फँस जाता है। मछली से उन्होंने जिह्वा के महान् संकट को सीखा: जो जीव स्वाद की लालसा से वश में है, वह चारे लगे काँटे की ओर खिंचकर मर जाता है। समस्त इन्द्रियों में जिह्वा को वश में करना सबसे कठिन है — जो उपवास करता है वह भी पाता है कि अन्य सभी इन्द्रियाँ वश में हो जाती हैं जबकि स्वाद की भूख और भी प्रबल हो जाती है।

तावज्जितेन्द्रियो न स्याद् विजितान्येन्द्रियः पुमान् ।
न जयेद् रसनं यावज्जितं सर्वं जिते रसे ॥ २१ ॥

tāvaj jītendriyo na syād vijitānyendriyaḥ pumān na jayed rasanam yāvaj jitaṁ sarvaṁ jite rase

अर्थ: भले ही मनुष्य ने अपनी अन्य सभी इन्द्रियों को वश में कर लिया हो, जब तक उसने जिह्वा पर विजय नहीं पाई, तब तक वह जितेन्द्रिय नहीं कहा जा सकता; किन्तु जब स्वाद की इन्द्रिय वश में हो जाती है, तब सभी इन्द्रियाँ वश में हो जाती हैं। (स्कन्ध 11, अध्याय 8, श्लोक 21)

पिंगला की कथा

तत्पश्चात् ब्राह्मण एक ऐसी शिक्षा पर आए जो किसी जीव से नहीं, अपितु एक स्त्री से सीखी गई — पिंगला, एक वेश्या जो कभी विदेह अर्थात् मिथिला नगरी में रहती थी।

पिङ्गला नाम वेश्यासीद् विदेहनगरे पुरा ।
तस्या मे शिक्षितं किञ्चिन्निबोध नृपनन्दन ॥ २२ ॥

piṅgalā nāma veśyāsīd videha-nagare purā tasyā me śikṣitaṁ kiñcin nibodha nṛpa-nandana

अर्थ: विदेह नगरी में कभी पिंगला नामक एक वेश्या रहती थी; हे राजकुमार, उससे मैंने जो कुछ सीखा, उसे सुनिए। (स्कन्ध 11, अध्याय 8, श्लोक 22)

एक रात्रि, अपने सर्वोत्तम श्रृंगार से सजी हुई, पिंगला अपने घर के द्वार पर खड़ी हुई, इस आशा में कि किसी धनी प्रेमी को भीतर बुला सके।

सा स्वैरिण्येकदा कान्तं सङ्केत उपनेष्यती ।
अभूत् काले बहिर्द्वारे बिभ्रती रूपमुत्तमम् ॥ २३ ॥

sā svairiṇy ekadā kāntaṁ saṅketa upaneṣyati abhūt kāle bahir dvāre bibhratī rūpam uttamam

अर्थ: अपने परम सौन्दर्य से सजी हुई, वह स्वच्छन्द स्त्री एक रात्रि अपने बाहरी द्वार पर खड़ी हुई, संकेत से किसी प्रेमी को भीतर लाने की प्रतीक्षा में। (स्कन्ध 11, अध्याय 8, श्लोक 23)



पिंगला वेश्या सजी-धजी अपने द्वार पर लम्बी रात्रि भर खड़ी रहती है, किसी धनी संरक्षक की व्यर्थ प्रतीक्षा करते हुए — जब तक निराशा ही उसके जागरण का द्वार नहीं बन जाती (श्लोक 23)।

जैसे-जैसे राहगीर आते-जाते रहे, वह प्रत्येक को कोई धनी पुरुष समझती रही जो उसके साथ के लिए धन दे सके; और प्रत्येक आगे बढ़ जाता रहा। बार-बार वह भीतर जाती और द्वार पर लौट आती, आशा से व्याकुल, मध्यरात्रि तक। उसका मुख सूख गया, उसका उत्साह टूट गया — और तब, उसी निराशा में, एक उद्धासक विचार उठा। वैराग्य, अवधूत ने कहा, एक तलवार के समान है जो आशा के फंदे को काट देती है; और जिसने संसार के प्रति यह विरक्ति अनुभव नहीं की, वह देह के बन्धनों को नहीं तोड़ सकता, जैसे विवेकहीन व्यक्ति “मेरेपन” के भाव को नहीं छोड़ सकता।

पिंगला ने अपनी ही मूर्खता को देखा और लज्जित हुई। वह कितनी मूर्ख रही थी, उसने सोचा, कि हृदय में निवास करने वाले तथा आनन्द एवं धन के सच्चे दाता उस अनश्वर भगवान् को त्यागकर एक तुच्छ नश्वर प्रेमी से अपने सुख की खोज करती रही। जो देह केवल हड्डियों का ढाँचा है, चमड़ी तथा बालों से ढँकी, अशुद्धि से भरी — उससे क्या सन्तोष कभी मिल सकता है? मिथिला के समस्त जनों में केवल वही मूर्ख थी।

विदेहानां पुरे ह्यस्मिन्नहमेकैव मूढधीः ।

यान्यमिच्छन्त्यसत्यस्मादात्मदात् काममच्युतात् ॥ ३४ ॥

videhānāṃ pure hy asminn aham ekaiva mūḍha-dhīḥ yānyam icchanty asaty asmād ātma-dāt kāmam acyutāt

अर्थ: इस विदेह नगरी में केवल मैं ही मूर्ख हूँ, जिसने अपना सन्तोष किसी दूसरे में — एक असत् में — खोजा, अपनी आत्मा तक देने वाले उस अच्युत भगवान् से विमुख होकर। (स्कन्ध 11, अध्याय 8, श्लोक 34)

पिंगला का वैराग्य-गौत

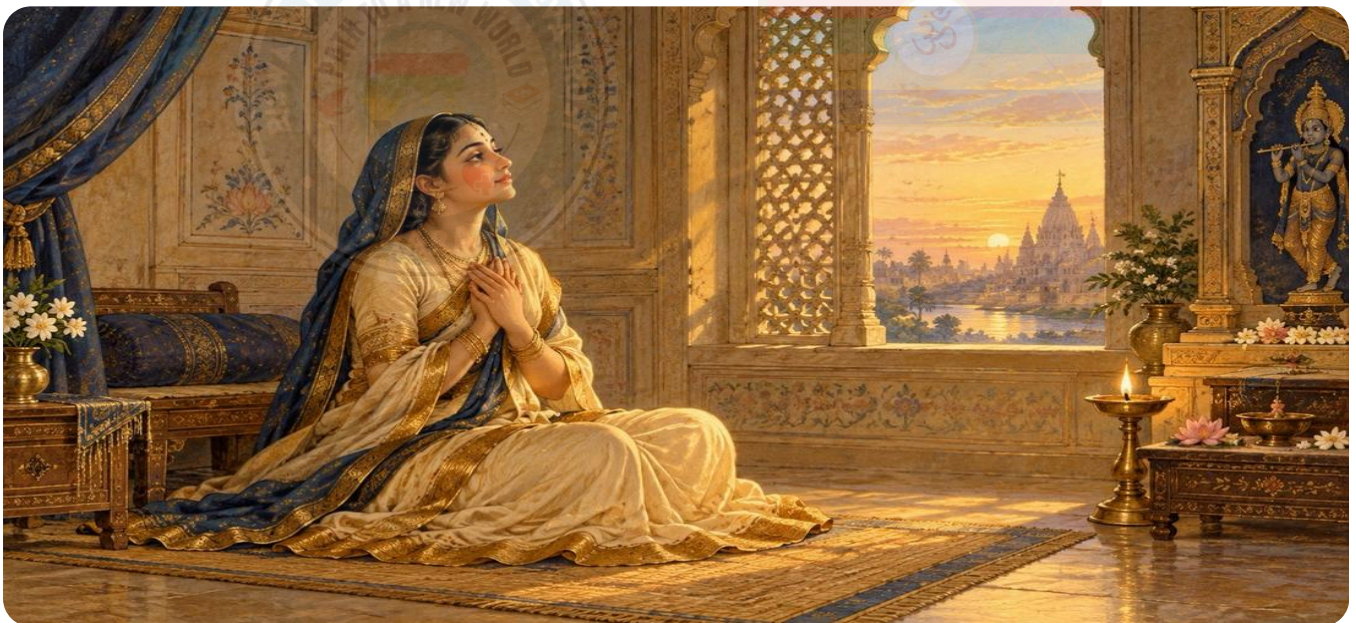
अब उसका हृदय पूर्णतः भगवान् की ओर मुड़ गया। उसने संकल्प किया कि वह स्वयं को केवल उन्हीं को अर्पित करेगी — समस्त देहधारियों के सच्चे मित्र, परम प्रिय तथा स्वयं आत्मा — और उन्हीं में अपना आनन्द पाएगी। संसार को काल-सर्प द्वारा ग्रस्त देखकर, उसने अन्ततः समझ लिया कि आत्मा ही अपना एकमात्र रक्षक है, और प्रत्येक सांसारिक विषय से थकी हुई आत्मा इस सत्य के प्रति जागती है। उसने उस निराशा को आशीर्वाद दिया जिसने उसे मुक्त किया: यदि वह कभी दुःखी न होती, तो उसे वह वैराग्य कभी न मिलता जो अब उसे शान्ति की ओर ले गया। समस्त दूषित आशाओं को त्यागकर, उसने भगवान् की शरण ली और सन्तुष्ट होकर विश्राम के लिए लेट गई।

आशा हि परमं दुःखं नैराश्यं परमं सुखम् ।

यथा सञ्छिद्य कान्ताशां सुखं सुष्वाप पिङ्गला ॥ ४४ ॥

āśā hi paramaṁ duḥkhaṁ nairāśyaṁ paramaṁ sukham yathā sañchidya kāntāśāṁ sukhaṁ suṣvāpa piṅgalā

अर्थ: आशा ही परम दुःख है, और आशा से मुक्ति परम सुख है; क्योंकि पिंगला, प्रेमी की समस्त आशा काटकर, परम शान्ति की निद्रा में सो गई। (स्कन्ध 11, अध्याय 8, श्लोक 44)



संसार की समस्त आशा काटकर तथा भगवान् की शरण लेकर, पिंगला अन्ततः परम शान्ति में विश्राम करती है — पूर्ण वैराग्य से उत्पन्न सबसे गहरा सुख (श्लोक 44)।

इस अध्याय की प्रमुख शिक्षाएँ

1. इन्द्रिय-सुख स्वयं ही आता-जाता है। चूँकि इन्द्रियों के सुख-दुःख प्रत्येक लोक में प्रत्येक प्राणी के पास बिना माँगे पहुँचते हैं, बुद्धिमान् जन उनके पीछे प्रयास नहीं करते (श्लोक 1)।

2. सन्तोष तथा समता साधु के लक्षण हैं। जो मिले उसे लेने वाले अजगर तथा न बढ़ने-न घटने वाले समुद्र की भाँति, भक्त स्थिर रहता है चाहे उसकी इच्छाएँ पूर्ण हों या न हों (श्लोक 2-6)।

3. अनियन्त्रित काम आत्मा का नाश करती है। अग्नि में पतंगा, फंदे में हाथी, गीत में खोया हरिण तथा स्वाद में फँसी मछली — सभी चेतावनी देते हैं कि एक भी अनियन्त्रित इन्द्रिय विनाश ला सकती है (श्लोक 7-21)।

4. अनेक से थोड़ा लें, और संचय कुछ न करें। पुष्पों को हानि पहुँचाए बिना मकरन्द लेने तथा कुछ न संचय करने वाले भ्रमर की भाँति, साधक समस्त शास्त्रों से सार ग्रहण करता है और संग्रह से मुक्त रहता है (श्लोक 9-16)।

5. जिह्वा को वश में करना सबसे कठिन इन्द्रिय है। जब तक स्वाद की लालसा वश में न हो, तब तक आत्म-संयम पूर्ण नहीं होता; और जब वह वश में होती है, तब सभी इन्द्रियाँ वश में हो जाती हैं (श्लोक 19-21)।

6. जब संसार की आशा मरती है, तब शान्ति जन्म लेती है। पिंगला का जागरण दर्शाता है कि वैराग्य वह तलवार है जो लालसा के फंदे को काटती है — और भगवान् की ओर मुड़ना ही आत्मा की सच्ची तथा चिरस्थायी शरण है (श्लोक 22-44)।

एक भक्तिपूर्ण चिन्तन

इस अध्याय के समस्त गुरुओं में, पिंगला ही हमारे साथ ठहरती है। वह कोई साधु नहीं, कोई संन्यासिनी नहीं — केवल एक सांसारिक स्त्री, जो जीवन भर उसका पीछा करते-करते थक गई जो उसे कभी सन्तुष्ट न कर सका। और फिर भी उसका परिवर्तन-बिन्दु अध्ययन या तपस्या से नहीं, अपितु सरल, ईमानदार निराशा से आता है। जब अन्ततः उसकी आशाएँ ढह जाती हैं, वह निराश नहीं होती; वह स्पष्ट रूप से देखती है कि वह क्या करती रही है, और उस स्पष्ट दृष्टि में वह मुक्त हो जाती है। इसमें प्रत्येक साधारण हृदय के लिए गहरी सान्त्वना है। हमें आरम्भ करने के लिए पूर्ण होने की आवश्यकता नहीं; हमें केवल उस रिक्तता के विषय में ईमानदार होना है जिसे हम पकड़े हुए हैं। अपूर्ण इच्छा की वही पीड़ा, यदि हम होने दें, तो वह तलवार बन सकती है जो फंदे को काट दे। पिंगला अपना समस्त स्व भगवान् को अर्पित करती है, उन्हें अपना सच्चा मित्र तथा अपनी ही आत्मा कहती है, और अपने जीवन की पहली शान्त निद्रा में लेट जाती है। उसकी कथा हमें धीरे से आश्चस्त करती है कि कोई आत्मा कभी इतनी दूर नहीं गई कि लौट न सके, और जिस क्षण हम संसार में आशा करना बन्द करके उनमें विश्राम करने लगते हैं, दुःख समाप्त होता है और शान्ति आरम्भ होती है।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज, पिंगला के परिवर्तन को अपना गुरु बनाइए। किसी एक आशा या लालसा को स्मरण कीजिए जिसने बहुत समय से आपके हृदय को व्याकुल रखा है — कोई परिणाम, वस्तु या स्वीकृति जिसका आप पीछा कर रहे हैं। कुछ शान्त क्षणों के लिए, उसे धीरे से रख दीजिए, जैसे पिंगला ने अपनी आशा द्वार पर रख दी थी, और इसके स्थान पर उस भगवान् की ओर मुड़िए जो हृदय में आपके सच्चे मित्र के रूप में निवास करते हैं। जैसे आप उसे छोड़ते हैं, उनके पवित्र नाम का धीरे से जप कीजिए: “ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।” छोड़ने के इस छोटे-से कार्य में, आप इस अध्याय की उसी शिक्षा का अभ्यास करते हैं — कि संसार में आशा से मुक्ति ही उनमें चिरस्थायी शान्ति का द्वार है।

उपसंहार

एकादश स्कन्ध का अष्टम प्रवचन चौबीस गुरुओं के महान् उपदेश को आगे बढ़ाता है। परिव्राजक अवधूत राजा यदु को अपने नौ और गुरुओं के विषय में बताते हैं: अजगर तथा समुद्र, जिन्होंने उन्हें सन्तोष तथा समता सिखाई; पतंगा, हाथी, हरिण तथा मछली, जिन्होंने चेताया कि एक भी अनियन्त्रित इन्द्रिय कैसे नाश कर सकती है; भ्रमर तथा मधु निकालने वाला, जिन्होंने थोड़ा ही लेना तथा कुछ न संचय करना सिखाया। इन सबसे ऊपर पिंगला की कथा खड़ी है, मिथिला की वह वेश्या, जिसकी व्यर्थ आशा-भरी लम्बी रात्रि उसके जागरण की रात्रि बन गई। समस्त सांसारिक लालसा को काटकर, उसने भगवान् की शरण ली और वह शान्ति पाई जो उसने पहले कभी न जानी थी। अध्याय हमें अपने ज्योतिर्मय सत्य के साथ छोड़ता है — कि संसार में आशा परम दुःख है, और भगवान् की शरण में उससे मुक्ति परम सुख है। शेष गुरु, तथा अवधूत के उपदेश का समापन, अगले अध्याय में आते हैं।

श्रीमद्भागवतम् की दिव्य वाणी हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जगाए।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

सन्दर्भ तथा आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, सम्पूर्ण), एकादश स्कन्ध, अष्टम प्रवचन, पृष्ठ 552-554।
- श्रृंखला: श्रीमद्भागवतम् विज़्डम • बिस्वा सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन तथा अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, श्रद्धापूर्ण पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी तथा लिप्यन्तरण में दिए गए हैं और उनके अर्थ सारांश रूप में हैं। यह किसी एक प्रकाशक के निरन्तर अनुवाद या टीका का पुनरुत्पादन नहीं है। किसी प्रकाशक से किसी सम्बन्ध या समर्थन का दावा नहीं किया गया है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-skandh-11-adhyay-8-pingala-katha-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज़्डम • कल्कि अवतार इंटरनेशनल • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट